बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 11 अंक 276

अनुचित करारोपण

उत्तर प्रदेश सरकार ने आबकारी उत्पादों पर 2 फीसदी गोरक्षा उपकर लगाने का निर्णय लिया है। इसके अलावा राज्य द्वारा संचालित टोल नाकों पर भी 0.5 फीसदी का उपकर लगाया जाएगा। सरकार ने उत्तर प्रदेश कृषि विपणन बोर्ड या मंडी परिषद के कर राजस्व पर लगने वाले शुल्क को भी एक फीसदी से बढ़ाकर दो फीसदी कर दिया है। इस पैसे का इस्तेमाल 'गोवंश आश्रय स्थल' की स्थापना और संचालन में किया जाएगा। ये आश्रय स्थल सभी गांवों, पंचायतों, नगर निकायों और नगर निगमों में बनाए जाएंगे और इनका संचालन शहरी और ग्रामीण नगर निकायों द्वारा किया जाएगा। इनकी स्थापना का उद्देश्य है राज्य में आवारा पशुओं की बढ़ती समस्या से निजात पाना। इसके अलावा महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का पैसा भी इन आश्रय स्थलों में किया जाएगा। इसके अलावा सरकारी क्षेत्र की मुनाफे में चल रही आठ कंपनियों मसलन सेतु निगम और उत्तर प्रदेश राज्य औद्योगिक विकास निगम को भी अपने कारोबारी सामाजिक उत्तरदायित्व फंड का 0.5 फीसदी हिस्सा गो आश्रय योजना के लिए देना होगा। यह सारी कवायद इसलिए की जा रही है ताकि राज्य के हर जिले में कम से कम 1,000 पशु क्षमता वाले आश्रय स्थल बनाए जा सकें।

सवाल यह है कि सत्ताधारी दल की नीतिगत गलती का खमियाजा उत्तर प्रदेश के लोगों को क्यों चुकाना चाहिए? निश्चित तौर पर उत्तर प्रदेश ऐसा उपकर थोपने वाला पहला प्रांत नहीं है। वर्ष 2016 में पंजाब में भाजपा और अकाली दल की तत्कालीन सरकार ने भी ऐसा ही उपकर लगाया था जबकि उसका कोई वास्तविक लाभ सामने नहीं आया। उत्तर प्रदेश में संकट की शुरुआत मार्च 2017 में भाजपा के सत्ता संभालते ही हो गई थी।

सरकार के शुरुआती निर्णयों में अवैध बूचड़खाने बंद करने और गो तस्करी के विरुद्ध अत्यधिक सख्ती बरतने जैसे कदम शामिल थे। यह सही है कि अवैध बूचड़खाने नहीं चलने चाहिए लेकिन राज्य सरकार ने इस काम में संलग्न छोटे और हाशिये वाले कारोबारियों और उनके कर्मचारियों की आजीविका के लिए कोई वैकल्पिक व्यवस्था तैयार नहीं की। सरकार के अतार्किक निर्णय ने प्रदेश में मांस के व्यापार को पूरी तरह बदल दिया। इससे एक बड़ी समस्या यह हुई कि जो पशु मालिक पहले अपने अनुत्पादक पशुओं को बूचड़खानों को बेच देते थे, उनको अब अपने जानवर आवारा छोड़ देना ज्यादा सही लगने लगा। तथाकथित गोरक्षकों द्वारा हिंसा की घटनाओं में इजाफा होने से हालात और बिगड़ने लगे। ये कथित गोरक्षक अक्सर भैंस का कारोबार करने वालों को प्रताड़ित करने लगे।

इसका नतीजा सभी देख रहे हैं। मांस का कारोबार और उससे जुड़े छोटे कारोबार पूरी तरह खत्म हो गए हैं और किसानों को मुसीबत का सामना करना पड़ रहा है। खबरों से पता चलता है कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश में तो परेशान किसान परित्यक्त पशुओं को स्कूलों और सरकारी इमारतों में बांध दे रहे हैं ताकि वे उनकी फसल को नुकसान न पहुंचाएं। कहना नहीं होगा पशु भी परेशानी का सामना कर रहे हैं। कई पशु तो भूख से मर रहे हैं। उपकर लगाने के बजाय सरकार को अपनी उस नीति पर पुनर्विचार करना चाहिए जो वास्तव में किसी के काम नहीं आई। सदियों से पशुओं के व्यापार और गाय के प्रति सांस्कृतिक लगाव का सह अस्तित्व रहा आया है और इससे किसी को परेशानी नहीं हुई। पशुओं के व्यापार पर रोक का निर्णय बेतुका है। ऐसे में यह सवाल तो बनता है कि भला एक खास किस्म की प्रतीकात्मक राजनीति का वित्तीय बोझ भला आम जनता क्यों उठाए?

बिनय सिन्हा

एक वर्ष में बदल गई राजनीतिक तस्वीर

राजनीति की पटकथा का एक नया पाठ सामने आया है। अगला चुनाव भाजपा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के लिए आसान नहीं होगा।

राजनीति में एक सप्ताह का अरसा लंबा हो या न हो लेकिन एक वर्ष तो यकीनन लंबा वक्त होता है। जरूरी नहीं कि राजनीतिक संदर्भ में भी वर्ष वैसा ही बीते जैसा अन्य संदर्भों में। यह इतने उन्माद से भरा भी हो सकता है कि उसके बीतने के बाद अचानक आपको लगे कि अरे! यह वर्ष तो बीत गया। यह हर वर्ष बदलाव भरा भी हो सकता है और नहीं भी।

साधारण शब्दों में कहें तो राजनीतिक मोर्चे पर कुछ वर्ष ठहराव भरे भी हो सकते हैं। मई 2014 के मध्य से लेकर 2017 के उत्तरार्द्ध तक कमोबेश ऐसा ही था। अगर प्रधानमंत्री ने नोटबंदी जैसे कदम नहीं उठाए होते तो ये वर्ष राजनीतिक टीकाकारों के लिए दु:स्वप्न साबित हो सकते थे।

वर्ष 2017 के जाड़ों तक अधिकांश विश्लेषक तीन बातों पर सहमत थे: पहली, बतौर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का दूसरा कार्यकाल सुनिश्चित है, राहुल गांधी और उनकी पार्टी यानी कांग्रेस, निरंतर पराभव की स्थिति में हैं और तीसरी इंदिरा गांधी के कार्यकाल के बाद पहली बार भारत लंबे समय तक एकदलीय और एकध्रुवीय शासन की दिशा में है। उत्तर प्रदेश में भारी जीत के साथ ही भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) 21 राज्यों पर काबिज हो चुकी थी और मोदी सरकार के कार्यकाल में वह शेष राज्यों के चुनावों और 2019 की कड़ी परीक्षा के लिए तैयार दिख रही थी। परंतु 2017 के मध्य दिसंबर में कुछ बदलाव नजर आने लगा। भाजपा गुजरात में छठी बार सत्ता में आने में कामयाब रही लेकिन उसे यह जीत बहुत करीबी मुकाबले में मिली। चुनाव प्रचार के दौरान मोदी और अमित शाह की बेचैनी साफ नजर आ रही थी।

इसके तुरंत बाद भाजपा संसदीय दल की बैठक में जीत और राहत के चलते जो आंसू निकले उन्होंने दिखा दिया कि मामला कितना करीबी था। उस वक्त हमने लिखा था कि अब उनका जोर वृद्धि और रोजगार के बजाय हिंदुत्व, लोक कल्याण के साथ धुर राष्ट्रवाद और भ्रष्टाचार विरोध रूपी तीन बिंदुओं पर होगा। हम इस बात पर संतोष कर सकते हैं कि हम सही थे।

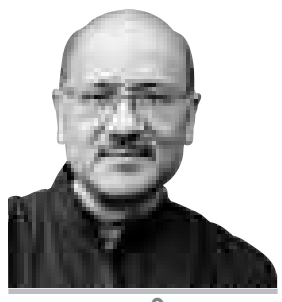

राष्ट्र की बात
शेखर गुप्ता

परंतु यह सबसे अहम बदलाव नहीं था और इस मायने में हम अनुमान लगाने में चूक भी गए। 17 दिसंबर, 2017 को ज्यादा लोगों को यह नहीं लगा होगा कि मात्र एक वर्ष की अवधि में भारतीय राजनीति अपनी एकध्रुवीय स्थिति खो देगी। परंतु हुआ एकदम यही।

राजनीति कितनी एकध्रुवीय हो गई है इसका अंदाजा टेलीविजन चैनल टाइम्स नाऊ की प्रस्तोता नविका कुमार और भाजपा महासचिव राम माधव के बीच की विनोदपूर्ण चर्चा से लगाया जा सकता है। यह पूछे जाने पर कि अगर भाजपा कर्नाटक में बहुमत का आंकड़ा नहीं पाती तो क्या होगा, सत्ताधारी दल के सबसे प्रभावशाली विचारक ने कहा– तो क्या हुआ, हमारे पास अमित शाह हैं।

वह कोई डींग नहीं हांक रहे थे। यह माना जाने लगा था कि अगर भाजपा कहीं भी आंकड़ों में पीछे रही तो शेष दलों के अधिकांश सदस्य स्वत: उसकी ओर आकर्षित होंगे क्योंकि वही एक ध्रुव है जहां वे आकर्षित हो सकते हैं। गोवा तथा पूर्वोत्तर के छोटे राज्यों में हम देख चुके हैं कि भाजपा ने बिना सबसे बड़ा दल हुए भी सरकार बनाई। मेघालय में तो वह दो विधायकों के साथ भी सरकार बनाने में कामयाब रही। यह बात साफ हो गई कि आंकड़े अब बेमानी हो चुके थे क्योंकि सामने कोई था ही नहीं। पूर्वोत्तर की कई भाजपा सरकारें तो एक तरह से अपने प्रभाव के कारण संभव हुए लाभ के सौदे का परिणाम थीं। राम माधव ने जब अमित शाह का नाम लिया तो वही उसी फायदे की बात कर रहे थे। इस धारणा को पहला झटका कर्नाटक में लगा। कांग्रेस ने सत्ता की लालसा त्यागते हुए छोटे सहयोगी दल को मुख्यमंत्री की कुर्सी सौंपकर अपने दोस्तों और दुश्मनों को चौंका दिया। इसके साथ ही एक नई राजनीति का बीज भी बोया गया और वह था भाजपा को किसी भी कीमत पर सत्ता से बाहर रखने की चाह रखने वाले दलों का बढ़ता गठजोड़। इससे अमित शाह की शैली की राजनीति को चुनौती मिली। उनकी ताकत संसाधनों और (आजकल खूब प्रयोग किए जा रहे एक शब्द) एजेंसियों से आती थी। कर्नाटक की जंग में एक वक्त ऐसा भी आया जब भाजपा के प्रतिद्वंद्वी तात्कालिक लाभ और एजेंसियों के भय के आगे कमजोर पड़ते दिखे। चुनाव के कुछ महीने पहले ही बेल्लारी के रेड्डी बंधुओं को सीबीआई से बचाने जैसे नैतिक रूप से कमजोर कृत्य के बावजूद भाजपा चुनाव जीतने में नाकाम रही। इस राजनीतिक झटके का असर गहरा रहा। कर्नाटक में सत्ता विरोधी लहर, भारी चुनाव खर्च, बेल्लारी की माफिया शक्ति के बावजूद और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सत्ताहरण के कड़े प्रतिरोध के बीच मोदी वहां निर्णायक जीत नहीं पा सके। इससे उनकी अपराजेय होने की छवि टूट गई।

कर्नाटक ने साबित किया कि मोदी और शाह अपराजेय नहीं हैं और कांग्रेस में उन्हें कूटनीतिक मात देने का माद्दा अभी शेष है। मोदी को कर्नाटक में सबसे लोकप्रिय माना जा रहा था लेकिन वे जीत नहीं सके। तमाम संसाधन और एजेंसियां भी उन्हें अपेक्षित विधायक दिलाने में नाकाम रहीं। सर्वोच्च न्यायालय जैसे संस्थान ने उनकी स्पष्ट अवज्ञा कर दी। ध्यान रहे कि यह सब संस्थागत स्तर पर मोदी-शाह को लगे पहले झटके के तकरीबन एक साल बाद हुआ। पहला झटका गुजरात राज्य सभा चुनाव के अहमद पटेल वाले मामले में निर्वाचन आयोग के हाथों लगा था। अब यह स्पष्ट होता जा रहा था कि भाजपा से सत्ता छीनी जा सकती है।

देश के हिंदीभाषी क्षेत्र में होने वाले चुनावों के लिए धारणा यहीं से तैयार हुई। कांग्रेस और उसके सहयोगियों को यकीन हो चला था कि भाजपा को हराया जा सकता है। दिसंबर 2017 के मध्य तक वे ऐसा सपने में भी नहीं सोच सकते थे लेकिन ठीक एक साल बाद उन्हें यकीन हो गया था कि सत्ता उनकी पहुंच में है। यही वजह है कि हम दिसंबर 2017 से दिसंबर 2018 की अवधि को सबसे अहम राजनीतिक वर्ष मान रहे हैं।

जिस दिन मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ चुनाव के नतीजे आए, हमने कह दिया था कि मोदी का कांग्रेस मुक्त भारत का सपना समाप्त हो चुका है। उन्होंने भी एएनआई की स्मिता प्रकाश को दिए अपने बहुचर्चित साक्षात्कार में परोक्ष रूप से इस बात को स्वीकार किया और कहा कि कांग्रेस मुक्त भारत से उनका तात्पर्य पार्टी से नहीं बल्कि उसकी विचारधारा से था। अपनी बात को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कांग्रेस की वैचारिकी को जातिवाद, वंशवाद, अलोकतांत्रिक और भाई-भतीजावाद वाली बताया।

अब राहुल गांधी का उभार देखने को मिल रहा है, सपा-बसपा जैसे जाति आधारित दलों के बीच गठबंधन से उत्तर प्रदेश में भाजपा के लिए कड़ी चुनौती उत्पन्न हो चुकी है और कांग्रेस भ्रष्टाचार के आरोपों के साथ उस पर लगातार हमले कर रही है। ऐसे में अगर मान भी लिया जाए कि एक विचार के रूप में कांग्रेस की उनकी परिभाषा सही थी, तो भी वह बहुत ताकतवर होकर सामने आई है। यह वह दूसरा ध्रुव है जो भारतीय राजनीति में तीन वर्ष से नदारद था।

यह कहना भी सही नहीं होगा कि 2019 के चुनाव के लिहाज से मोदी अब मुकाबले से बाहर हैं। उनकी निजी लोकप्रियता, श्रोताओं से संवाद और चुंबकीय करिश्मा अब भी बरकरार है। जैसा कि हमने पहले भी कहा है, भारत में बहुमत वाला शक्तिशाली नेता कभी अपने प्रतिद्वंद्वी से नहीं हारा, वह खुद से ही हारता है। सन 1977 में इंदिरा गांधी के साथ ऐसा हो चुका है।

ऐसे में तीन बातें हो सकती हैं: पहली, मोदी इतने अलोकप्रिय हो जाएं कि लोग उनके खिलाफ मतदान करें चाहे सत्ता में कोई भी आए। दूसरा, विविध राजनीतिक शक्तियां उन्हें इस हद तक नापसंद करें कि वे अपने मतभेद और महत्त्वाकांक्षाएं भुलाकर उनके खिलाफ एकजुट हों और तीसरा, कोई ऐसी शक्ति हो (भले ही वह भावी प्रधानमंत्री न हो) जिसके इर्दगिर्द वे एकजुट हो सकें। सन 1977 में इंदिरा गांधी के खिलाफ जयप्रकाश नारायण ने यह भूमिका निभाई थी। सन 1989 में राजीव गांधी के खिलाफ विश्वनाथ प्रताप सिंह इस भूमिका में थे।

जो राहुल गांधी एक वर्ष पहले लड़खड़ाते हुए अनाड़ी उत्तराधिकारी दिख रहे थे वह कांग्रेस को दूसरे ध्रुव की स्थिति में ले आए हैं। अब वर्ष 2019 का मुकाबला खुला है। यही वजह है कि प्रधानमंत्री संसद के बजाय अपने चुनाव प्रचार को तरजीह दे रहे हैं।

न्यायपालिका में खाली पदों से कैसे प्रभावित हो रहा है कारोबार

न्यायपालिका की व्यवस्था में उच्चतम न्यायालय के अधीन सैकड़ों अदालतें और पंचाट हैं जहां आर्थिक और वित्तीय मामलों पर सुनवाई होती है। कारोबार से जुड़े मामलों की संख्या बढ़ते जाने के मद्देनजर उच्च न्यायालयों में व्यावसायिक अदालतें गठित की गई हैं। आयकर, बौद्धिक संपदा अधिकार, बिजली विनियमन, उपभोक्ता कानून और दूसरे अन्य क्षेत्रों से जुड़े विवादों के लिए पंचाट हैं। कंपनी जगत में खलबली मचाने वाला राष्ट्रीय कंपनी कानून पंचाट (एनसीएलटी) हाल में इस क्लब में शामिल हुआ है। कारोबार बढ़ने के साथ न्यायिक संस्थाओं की संख्या भी उसी अनुपात में बढ़ी हैं। फिर भी इन न्यायिक संस्थाओं का प्रदर्शन संतोषजनक नहीं है। कारोबार की राह आसान बनाने की दिशा में इसे एक बहुत बड़ी बाधा के रूप में देखा जाता है। इसके लिए पूरी तरह इन संस्थाओं को जिम्मेदार नहीं माना जा सकता है। उदाहरण के लिए उच्च न्यायालयों और निचली अदालतों में रिक्त पदों की संख्या चौंकाने वाली है। देश के 24 उच्च न्यायालयों में 384 पद रिक्त पड़े हैं। प्रमुख व्यावसायिक केंद्रों में तो हालत और भी खराब है। बंबई उच्च न्यायालय में 94 में से 33, दिल्ली उच्च न्यायालय ने 60 में से 21 और कलकत्ता उच्च न्यायालय में 94 में से 22 पद खाली पड़े हैं। निचली अदालतों में करीब 5,000 पद खाली पड़े हैं जो उनमें कुल मंजूर पदों की संख्या का एक चौथाई है। देश में मुकदमों की शुरुआत भी निचली अदालतों से ही होती है। इनमें मध्यस्थ पंचाटों के फैसलों को चुनौती, चेक बाउंस होने के मामले, शेयरों का हस्तांतरण और कंपनियों से जुड़े धोखाधड़ी के मामले शामिल हैं। जब अदालतों में कर्मचारी ही नहीं होंगे तो जाहिर है कि मामले कई वर्षों तक चलते रहते हैं और लोगों का व्यवस्था पर भरोसा नहीं रहता है।

कई पंचाटों में स्थिति इतनी बदतर है कि पदों को भरने के लिए उनके बार एसोसिएशनों को अक्सर मदद के लिए उच्चतम न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ता है। अदालत सरकारों को निर्देश जारी करती है जिन्हें तकनीकी आधार पर और फंड की कमी का रोना रोकर नजरअंदाज कर दिया जाता है।

अदालती आईना
एम जे एंटनी

देश के 24 उच्च न्यायालयों में 384 पद रिक्त पड़े हैं। निचली अदालतों में करीब 5,000 पद खाली पड़े हैं जो उनमें कुल मंजूर पदों की संख्या का एक चौथाई है

निचली अदालतों को धन की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है और उच्च न्यायालय न्यायाधीशों तथा कर्मचारियों की नियुक्ति करते हैं। अलबत्ता राज्य के बजट का 0.2 फीसदी या इससे भी कम न्यायपालिका को दिया जाता है। केंद्र में भी यही स्थिति है। यही वजह है कि अदालतें जीर्णशीर्ण भवनों या पट्टे पर ली गई इमारतों में काम करती हैं। उनके पास न तो पर्याप्त संख्या में कर्मचारी होते हैं और न ही स्टेशनरी होती है। हाल में बंबई उच्च न्यायालय ने महाराष्ट्र में अदालतों की दयनीय स्थिति पर एक लंबा चौड़ा फैसला दिया। अगर महाराष्ट्र में यह स्थिति है तो कम विकसित राज्यों में क्या हालत होगी, इसकी कल्पना करना मुश्किल नहीं है। इसका एक विरोधाभासी परिणाम यह है कि कुछ ही सफल वकील न्यायिक पदों को स्वीकार करते हैं और महानगरों के प्रबुद्ध वकीलों को कम जानकारी रखने वाले न्यायाधीशों के समक्ष दलीलें रखनी पड़ती है।

न्यायपालिका की मौजूदा दुर्दशा और इसे कारोबारी जगत की चिंता में कानून बनाने वालों का भी योगदान है। खामियों को दूर करने के लिए कुछ कानूनों को कुछ ही वर्षों के दौरान कई बार संशोधित करना पड़ा है। आयकर कानून में ऐसे कई प्रावधान हैं जिन्हें सैकड़ों बार संशोधित किया जा चुका है। एनसीएलटी सहित सभी पंचाटों के गठन से पूर्व इनके प्रावधानों की वैधता को लेकर उच्चतम न्यायालय में लंबी बहस चली है। इन प्रावधानों में अधिकारियों को न्यायिक सदस्यों से ज्यादा तरजीह दी गई थी। ऋणशोधन अक्षमता और दिवालिया संहिता (आईबीसी) के कई प्रावधानों को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई है और इन पर 2019 में फैसला आने की उम्मीद है। मध्यस्थता एवं सुलह कानून के प्रावधानों की कई वर्षों तक न्यायिक व्याख्या होती रही।

न्यायपालिका को रूढ़िवादी संस्था माना जाता है और डिजिटल की दुनिया को अपनाने की इसकी प्रगति बहुत धीमी रही है। उच्चतम न्यायालय के गलियारे फाइलों से भरी अलमारियों से पटे पड़े हैं और जिन फाइलों को इन अलमारियों में जगह नहीं मिल पाई है, वे फर्श पर बिखरी हैं। दो साल पहले कागजरहित व्यवस्था का वादा किया गया था लेकिन न्यायपालिका को अभी उस दौर का इंतजार है। लॉ फर्मों में डिजिटल की रफ्तार न्यायपालिका से कहीं ज्यादा तेज है।

अपील अदालतों में जाने वाली अपीलों के अक्सर संस्थाओं खासकर सरकारी संस्थाओं के पास भारी मात्रा में फंड उपलब्ध रहता है। दिल्ली उच्च न्यायालय ने बीते साल कई बार भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (एनएचएआई) को झिड़की दी और मध्यस्थता कानून के एक मामले में तो भारी जुर्माना भी लगाया। न्यायालय ने कहा, 'हमने इस कानून के तहत कई याचिकाओं और अपील पर कई बार अपनी असहजता जाहिर की है। हम फिर इसे दोहराना नहीं चाहते हैं।'

विभिन्न उच्च न्यायालयों के कई कंपनियों और उनके वकीलों को नसीहत के बावजूद दूसरे कानूनों के प्रावधानों का दुरुपयोग भी धड़ल्ले से जारी है। बेकार की मुकदमेबाजी को नियंत्रित करने के लिए कोई नियामक नहीं है और कोई स्वनियमन भी नहीं है। परस्पर विरोधी मुकदमेबाजी आम है और कानूनी पेशा इसका पोषण करता है। इस पेशे से जुड़े लोग इन खामियों से अच्छी तरह वाकिफ हैं लेकिन अल्पकालिक लाभ के लिए बड़े हितों की बलि दी जाती है।

कानाफूसी

राष्ट्रीय कार्यालय-राष्ट्रीय भूमिका

ऐसा लगता है मानो राजनीतिक दलों की ओर से अचल संपत्ति की मांग कभी समाप्त नहीं होने वाली। इनमें सबसे ताजा नाम है तेलंगाना राष्ट्र समिति यानी टीआरएस का। पार्टी ने कहा है कि वह जल्दी ही दिल्ली में अपना राष्ट्रीय कार्यालय खोलेगी। केंद्र सरकार पार्टी को 1,200 वर्ग गज जमीन देने के लिए भी तैयार हो गई है। टीआरएस के राष्ट्रीय अध्यक्ष और तेलंगाना के मुख्यमंत्री के चंद्रशेखर राव (केसीआर) पिछले सप्ताह दिल्ली आए तो उन्होंने उस जमीन का भी मुआयना किया। टीआरएस को यह जमीन 5 करोड़ रुपये में दी जाएगी। केसीआर ने बी विनोद कुमार के नेतृत्व में अपने सांसदों का एक दल भेजा था जिसने सुझाए गए तीन भूखंडों में से एक का चयन किया। उन्होंने पार्टी सांसदों से यह भी कहा कि वह 15 जनवरी के बाद पार्टी कार्यालय की आधारशिला रखेंगे और मई के अंतिम सप्ताह में नई लोकसभा के गठन से पहले तक निर्माण कार्य पूरा कर लिया जाएगा। माना जा रहा है कि भवन निर्माण में करीब 25 करोड़ रुपये की लागत आएगी। माना जा रहा है कि यह राष्ट्रीय कार्यालय पार्टी के काम आएगा क्योंकि वह संघीय मोर्चे के जरिये केंद्रीय राजनीति में अपनी भूमिका बढ़ाना चाहती है। पार्टी आंध्र प्रदेश में विस्तार के जरिये अपनी भूमिका बढ़ाना चाहती है। इस कार्यालय में राष्ट्रीय अध्यक्ष की बैठक व्यवस्था के अलावा अतिथियों और गणमान्य आगंतुकों के लिए बैठक कक्ष भी बनाया जाएगा। इसके अलावा केसीआर ने छह माह में तेलंगाना के 33 जिलों में भी कार्यालय बनाने का निर्णय किया है। फिलहाल पार्टी का एकमात्र निजी कार्यालय हैदराबाद के बंजारा हिल्स स्थित तेलंगाना भवन में है। कुछ अन्य कार्यालय किराये की इमारतों में हैं।

आपका पक्ष

देश में एनआरसी की जरूरत

देश में राष्ट्रीय नागरिक पंजी (एनआरसी) इन दिनों सुर्खियों में है। असम में कुछ लोग एनआरसी का विरोध कर रहे हैं। झारखंड में एनआरसी लागू करने की मांग की गई है। दरअसल एनआरसी एक ऐसा रजिस्टर है जिसमें राज्य में रह रहे नागरिकों का ब्योरा लिया जाता है। इसका मूल उद्देश्य देश के नागरिकों की पहचान करना तथा बांग्लादेश आदि देशों से अवैध घुसपैठ कर आए लोगों की पहचान कर उसे वापस भेजना है। बांग्लादेश से अवैध घुसपैठ की घटना होती रहती है। इससे देश में बांग्लादेश से अवैध घुसपैठ कर आए लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है तथा ऐसे लोग किसी तरह जाली दस्तावेज बनाकर देश में नागरिक बनकर रह रहे हैं। इससे देश की सुरक्षा को खतरा है। सरकार नागरिकता (संशोधन) विधेयक 2016, नागरिकता अधिनियम 1955 में संशोधन करने पर विचार कर रही है। इससे अफगानिस्तान, पाकिस्तान तथा बांग्लादेश के हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई धर्म के लोग भारत में छह वर्ष बिताने के बाद उन्हें नागरिकता दी जा सकती है। भारत धर्मनिरपेक्ष देश है और यहां सभी धर्मों को समान स्थान मिला है। यहां किसी धर्म, जाति तथा व्यक्ति विशेष के साथ भेदभाव नहीं किया जाता है।

प्रधानमंत्री ने आश्वसान दिया कि एनआरसी से कोई भी वास्तविक व्यक्ति नहीं छूटेगा

लेकिन रोहिंग्या मामले के बाद देश में अवैध घुसपैठ एक चिंता का विषय बन गया है। म्यांमार से रोहिंग्या लोगों को निकाले जाने के बाद यह पड़ोसी देशों के लिए भी चिंता का विषय बन गया है। अत: सरकार की राष्ट्रीय नागरिक पंजी का निर्माण करना सराहनीय पहल है। इससे अवैध घुसपैठियों की पहचान हो सकेगी तथा उन्हें वापस उनके देश में भेजा जा सकेगा। इससे देश में अवैध घुसपैठ तथा आतंकवादी गतिविधियों पर रोक लग सकेगी।

किशोर कुमार, नोएडा

राफेल मुद्दे पर कौन सच्चा, कौन झूठा

इन दिनों राफेल मामले ने तूल पकड़ रखी है। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी सत्तारूढ़ भाजपा पर राफेल सौदे में गड़बड़ी को लेकर रोजाना आरोप मढ़ रहे हैं। यह मामला शीर्ष न्यायालय गया तथा न्यायालय ने इसपर अपना आदेश भी सुनाया। वहीं भाजपा सरकार विपक्ष के आरोपों को झूठा करार दे रही है। लेकिन सवाल यह है कि इस मामले में कौन सच कह रहा है और कौन झूठ कह रहा है। या यह भी हो सकता है कि सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों सच कह रहे हों। राफेल का मामला जब अदालत पहुंचा तब अदालत ने इस करार को क्लीन चिट दे दिया। इसके बावजूद विपक्ष रोज सरकार को राफेल मामले में घेर रही है। पिछले दिनों रक्षा मंत्री निर्मला सीतारमण ने संसद में लगे आरोपों का क्रमवार जवाब दिया। देश की सबसे बड़ी पंचायत में रक्षा मंत्री ने विपक्ष के सभी सवालों का जवाब दिया और इस मामले में कोई भी गड़बड़ी से इनकार कर दिया। लेकिन देश की जनता अबतक असमंजस में है कि कौन सच कह रहा है। नेता अपने स्वार्थ के लिए कम से कम देश की सुरक्षा से खिलवाड़ न करे देश की जनता यही चाहती है। अत: जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों से देश की जनता यह अपेक्षा रखती है कि वह जनता को सच बताए तथा गुमराह न करे।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।